theJournals

Multidisciplinary Multilingual Research Journal, e-ISSN: 3107-8141
October-December 2025 | Volume: 01, Issue: 02, Page No.: 22-31
https://doi.org/10.64006/mmrj/1204

ORIGINAL ARTICLE |Received:08th August 2025 | Revised:17th September 2025 | Accepted:10th October 2025 | Published:18th December 2025

सभ्यतागत दृष्टि से महिला सशक्तिकरण: सावित्रीबाई फुले और शिक्षा का विमर्श

टीना बग्गा[1], कोकिला मीना[2]

सारांश

सावित्रीबाई फुले आधुनिक भारतीय इतिहास की सबसे परिवर्तनकारी हस्तियों में से एक हैं, जिन्होंने महिला सशक्तिकरण और भारतीय ज्ञान परंपरा (Indian Knowledge System - IKS) के सभ्यतागत ethos को एक साथ मूर्त रूप दिया। भारत की पहली आधुनिक महिला शिक्षिका के रूप में उन्होंने शिक्षा को केवल साक्षरता नहीं, बल्कि विद्या के रूप में परिभाषित किया–एक ऐसी मुक्ति की शक्ति जो समानता (समता), न्याय (न्याय) और सामाजिक उत्तरदायित्व (धर्म) में निहित है। ज्योतिराव फुले के साथ उनका सहयोग वैवाहिक ही नहीं बल्कि सभ्यतागत भी था, जिसने विद्यालयों के माध्यम से जातिगत पदानुक्रम और पितृसत्तात्मक प्रतिबंधों को चुनौती दी तथा यह सिद्ध किया कि ज्ञान सामूहिक अधिकार है। कक्षा से बाहर भी सावित्रीबाई ने सामाजिक सुधार को आगे बढ़ाया–विधवाओं के लिए आश्रय, परित्यक्त शिशुओं के लिए गृह और ऐसे सामुदायिक स्थल स्थापित किए जहाँ साक्षरता को व्यावसायिक और नैतिक प्रशिक्षण से जोड़ा गया। उनकी शिक्षण पद्धति गांधी के नई तालीम से दशकों पहले ही सामुदायिक और संदर्भ-आधारित शिक्षा पर बल देती थी। 1897 के प्लेग महामारी के दौरान सेवा करते हुए उन्होंने अपने जीवन का बलिदान दिया, भारतीय परंपरा के सेवा सिद्धांत को सर्वोच्च कर्तव्य के रूप में मूर्त रूप दिया। इस प्रकार उनकी विरासत शिक्षा से परे जाकर भारत की सभ्यतागत स्मृति की संरक्षिका और समावेशी कल्याण की अग्रदूत के रूप में स्थापित होती है। यह अध्ययन सावित्रीबाई फुले को महिला सशक्तिकरण और IKS के व्यापक विमर्श में रखता है, और तर्क देता है कि उनका योगदान केवल ज्ञान तक पहुँच का विस्तार नहीं बल्कि सभ्यतागत पुनर्नवीकरण है, जो आज भी न्याय, गरिमा और समानता के आंदोलनों को प्रेरित करता है।

मुख्य शब्द: *:सावित्रीबाई फुले, महिला सशक्तिकरण, भारतीय ज्ञान परंपरा, समावेशी शिक्षा, सामाजिक सुधा*

This article is published under the **Creative Commons Attribution–Non-commercial (CC BY-NC) License**. Readers are free to share, adapt, and reproduce the material for non-commercial purposes, with appropriate credit to the author(s) and the source. Permission is required for any commercial use.

पृष्ठभूमि

आज विश्व में महिला सशक्तिकरण को सामाजिक न्याय और सतत विकास की आधारशिला के रूप में लगातार चर्चा का विषय बनाया जा रहा है। विश्वविद्यालयों, नीतिगत ढाँचों और जमीनी आंदोलनों में सशक्तिकरण को केवल अवसरों तक पहुँच नहीं, बल्कि उन संरचनात्मक बाधाओं को तोड़ना माना जाता है जिन्होंने ऐतिहासिक रूप से महिलाओं की आवाज़ को मौन कर दिया था (Forbes, 1996)। भारतीय संदर्भ में यह वैश्विक विमर्श सावित्रीबाई फुले के जीवन और कार्य में अपनी सबसे गहन आधुनिक अभिव्यक्ति पाता है, जिनका योगदान आज भी समानता और न्याय पर समकालीन बहसों को प्रेरित करता है। भारत की दीर्घ सभ्यतागत यात्रा में ज्ञान का विचार केवल साक्षरता से कहीं अधिक रहा है; इसे एक पवित्र शक्ति, *विद्या*–शुद्धिकर्ता, मुक्तिदाता और गरिमा तक पहुँच का

[1] प्रोफेसर, प्रबंधन अध्ययन विभाग, जामिया मिलिया इस्लामिया, केंद्रीय विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत
[2] सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र विभाग, सत्यवती महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय (DU), भारत

How to cite: बग्गा, टी., & मीना, क. (2025). सभ्यतागत दृष्टि से महिला सशक्तिकरण: सावित्रीबाई फुले और शिक्षा का विमर्श. *Multidisciplinary Multilingual Research Journal, 1*(2), 22-31. https://doi.org/10.64006/mmrj/1204

मार्ग–के रूप में देखा गया। उपनिषदों के आह्वान "सा विद्या या विमुक्तये" (ज्ञान वही है जो मुक्त करता है) से लेकर बौद्ध परंपरा के *प्रज्ञा* पर बल तक, शिक्षा को मानव मन को मुक्त करने और समाज को ऊपर उठाने का साधन माना गया। किंतु 19वीं शताब्दी तक आते-आते यह प्राचीन भारतीय खुली और समावेशी शिक्षा की भावना जातिगत कठोरता, पितृसत्तात्मक प्रतिबंधों और औपनिवेशिक शिक्षा व्यवस्था के विकृत रूप के बोझ तले दब गई (Pal, 2024)।

सावित्रीबाई फुले का जन्म 3 जनवरी 1831 को नायगाँव में हुआ, उस समय भारतीय महिलाएँ, विशेषकर वंचित जातियों से आने वाली, व्यवस्थित रूप से ज्ञान से वंचित की जाती थीं। औपनिवेशिक व्यवस्था ने एक संकीर्ण, परीक्षा-केंद्रित शिक्षा प्रणाली लागू की थी जो उच्च जातियों और पुरुषों को विशेषाधिकार देती थी, जबकि पारंपरिक गुरुकुल लगभग समाप्त हो चुके थे। समुदायों का जीवित ज्ञान, *लोकविद्या*, जिसे भारतीय ज्ञान परंपरा आवश्यक मानती है, उसे हीन समझकर खारिज कर दिया गया (Sarvamangala, 2022)। इसी विखंडित सामाजिक संरचना में सावित्रीबाई की यात्रा महिला सशक्तिकरण का एक निर्णायक मोड़ बनी। भारत की पहली आधुनिक महिला शिक्षिका के रूप में उन्होंने कक्षा में कदम रखकर न केवल *विद्या* को मुक्ति के रूप में सभ्यतागत ethos के रूप में पुनः प्राप्त किया, बल्कि उसे उन तक विस्तारित किया जिन्हें ऐतिहासिक रूप से बाहर रखा गया था। उनका जीवन और कार्य इस प्रकार भारत की ज्ञान परंपराओं के पुनरुद्धार और आधुनिक युग में महिला सशक्तिकरण की एक क्रांतिकारी पुनर्कल्पना का प्रतिनिधित्व करता है (Bera, 2024)।

सावित्रीबाई ऐसे समय में आईं जब भारतीय महिलाएँ, विशेषकर वंचित जातियों से आने वाली, व्यवस्थित रूप से ज्ञान से वंचित थीं। औपनिवेशिक व्यवस्था ने एक कठोर, परीक्षा-केंद्रित शिक्षा नेटवर्क स्थापित कर दिया था जो उच्च जातियों और पुरुषों को विशेषाधिकार देता था (Forbes, 1996)। पारंपरिक गुरुकुल लगभग समाप्त हो चुके थे और समुदायों का जीवित ज्ञान, *लोकविद्या*, जिसे भारतीय ज्ञान परंपरा आवश्यक मानती है, उसे हीन समझा जाता था (Sarvamangala, 2022)। इसी विखंडित सामाजिक संरचना में उनका जीवन एक ऐसी बालिका के रूप में शुरू हुआ जिसका भविष्य, लाखों अन्य लोगों की तरह, जन्म से ही पूर्वनिर्धारित प्रतीत होता था (Pal, 2024; Bera, 2024)। किंतु इसी बहिष्कार और वंचना के संदर्भ में सावित्रीबाई की यात्रा प्रतिरोध का एक प्रकाशस्तंभ बनकर उभरी, जिसने व्यक्तिगत संघर्ष को सामूहिक सशक्तिकरण में रूपांतरित कर दिया।

सशक्तिकरण साझेदारी और सुधार के माध्यम से

निर्णायक मोड़ तब आया जब सावित्रीबाई ने बहुत कम उम्र में ज्योतिराव फुले से विवाह किया। वंशानुगत सामाजिक व्यवस्था को स्वीकारने के बजाय, ज्योतिराव ने भारतीय सभ्यता के उस मूल भाव को अपनाया जो शिक्षा की रूपांतरणकारी शक्ति में विश्वास करता था। उन्होंने घर पर ही सावित्रीबाई को पढ़ाना शुरू किया, और 1840 के दशक में पति द्वारा पत्नी को पढ़ाना एक अत्यंत क्रांतिकारी कदम था क्योंकि इससे एक प्राचीन भारतीय नैतिक सिद्धांत पुनर्स्थापित हुआ: शिक्षा अधिकार है, विशेषाधिकार नहीं (O'Hanlon, 1985)। उस समाज में जहाँ स्त्रियों को साक्षरता से वंचित कर घरेलू भूमिकाओं तक सीमित कर दिया गया था, ज्योतिराव का यह निर्णय नैतिक साहस और करुणा का प्रतीक था। उन्होंने समझा कि समाज की मुक्ति स्त्रियों के सशक्तिकरण के बिना संभव नहीं है, और उन्होंने सावित्रीबाई में केवल पत्नी नहीं बल्कि सुधार की सहभागी देखी। उनके बौद्धिक विकास को पोषित कर वे उस क्रांति के बीज बो रहे थे जो भारत के शैक्षिक और सामाजिक परिदृश्य में स्त्रियों की भूमिका को पुनर्परिभाषित करने वाली थी (Pal, 2024)।

सावित्रीबाई ने केवल साक्षरता ही नहीं, बल्कि समता (समानता), न्याय (न्याय) और धर्म (सामाजिक उत्तरदायित्व) जैसे गहन दार्शनिक आधार भी आत्मसात किए, जो आगे चलकर उनके समस्त कार्यों की नींव बने। ज्योतिराव

की महानता इस बात में थी कि वे अपने समय की संकीर्ण सीमाओं से परे देख सके और स्त्री की क्षमता पर विश्वास कर सके कि वह परिवर्तन का नेतृत्व कर सकती है। उन्होंने सावित्रीबाई को समान दर्जा दिया, उन्हें कक्षाओं में प्रवेश करने और सदियों के उत्पीड़न को चुनौती देने के लिए सशक्त किया। जब सावित्रीबाई को स्कूल जाते समय उत्पीड़न का सामना करना पड़ा–उन पर पत्थर, कीचड़ और गोबर फेंका गया–तो ज्योतिराव दृढ़ता से उनके साथ खड़े रहे, उन्हें शत्रुता से बचाया और आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया (Bera, 2024)। उनके अडिग समर्थन ने सावित्रीबाई को संघर्ष जारी रखने की शक्ति दी, जिससे व्यक्तिगत साहस सामूहिक सुधार में परिवर्तित हो गया।

ज्योतिराव और सावित्रीबाई फुले ने मिलकर लड़कियों और हाशिए पर रहने वाले समुदायों के लिए विद्यालय खोले, जिससे 19वीं सदी के भारत में शिक्षा की उन दीवारों को तोड़ा गया जो लंबे समय से केवल विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग तक सीमित थीं। उनका संबंध केवल वैवाहिक नहीं था, बल्कि सभ्यतागत था–प्रेम, समानता और न्याय की साझा दृष्टि पर आधारित। उस युग में जब स्त्रियों को साक्षरता से वंचित रखा गया और निम्न जातियों को शिक्षा से बाहर कर दिया गया था, उनके संयुक्त प्रयासों ने शिक्षा को सार्वभौमिक अधिकार के रूप में पुनर्परिभाषित किया। भारत की पहली महिला शिक्षिका के रूप में सावित्रीबाई की सफलता ज्योतिराव के विश्वास और मार्गदर्शन से अविभाज्य थी। उन्होंने कभी उनके उपलब्धियों को दबाने का प्रयास नहीं किया, बल्कि उन्हें नेतृत्व में आगे बढ़ने के लिए सशक्त किया, जिससे वे स्त्री शिक्षा की अग्रदूत के रूप में चमक सकीं (Forbes, 1996)। यह सशक्तिकरण क्रांतिकारी था क्योंकि इसने पितृसत्तात्मक मान्यताओं और जातिगत पदानुक्रम दोनों को चुनौती दी, यह दर्शाते हुए कि सच्चा सुधार तभी संभव है जब घर और समाज दोनों में समानता स्थापित हो।

उनके विद्यालय आशा के आश्रय बन गए, जहाँ युवा लड़कियाँ और उत्पीड़ित समुदायों के बच्चे शिक्षा के माध्यम से गरिमा का अनुभव कर सकते थे। प्रत्येक कक्षा एक शांत क्रांति थी, जो सदियों के उत्पीड़न को ध्वस्त कर सामाजिक परिवर्तन के बीज बो रही थी। ज्योतिराव की उदारता सावित्रीबाई की महानता की नींव बनी, क्योंकि उनके विश्वास ने सावित्रीबाई को उपहास, उत्पीड़न और शत्रुता सहने का साहस दिया। बदले में, सावित्रीबाई की दृढ़ता और प्रतिभा ने उनके दृष्टिकोण को सत्यापित किया, यह सिद्ध करते हुए कि स्त्रियाँ सुधार का नेतृत्व कर सकती हैं और पीढ़ियों को प्रेरित कर सकती हैं। दोनों ने मिलकर यह सिद्धांत मूर्त रूप दिया कि शिक्षा केवल साक्षरता नहीं बल्कि मुक्ति है–एक शक्ति जो न्याय और समानता को पुनर्स्थापित करती है। उनके संयुक्त प्रयासों ने एक ऐसी विरासत छोड़ी जो आज भी सामाजिक न्याय और लैंगिक समानता के आंदोलनों को प्रेरित करती है, यह याद दिलाते हुए कि प्रगति सबसे प्रभावशाली तब होती है जब वह साझेदारी, करुणा और जड़ जमाए पदानुक्रमों को चुनौती देने के साहस पर आधारित हो (Omvedt, 1976)।

शिक्षिका से सभ्यतागत प्रतीक तक

जब सावित्रीबाई फुले ने औपचारिक शिक्षक प्रशिक्षण पूरा किया और भारत की पहली आधुनिक महिला शिक्षिका के रूप में अपनी भूमिका निभाई, तो यह केवल प्रशासनिक कार्य नहीं था, बल्कि सभ्यतागत था। उस क्षण में वे उस परंपरा को पुनः प्राप्त कर रही थीं जो भारतीया विदुषियों–गार्गी, मैत्रेयी और आत्मदेवी–तक जाती है, जिनकी बौद्धिक उपस्थिति ने कभी भारतीय चिंतन को आकार दिया था, परंतु सदियों की सामाजिक प्रतिगति ने उसे दबा दिया था (Forbes, 1996)। हालाँकि, सावित्रीबाई की यात्रा प्राचीन विदुषियों से भिन्न थी। गार्गी और मैत्रेयी जहाँ वैदिक विमर्श के विशेषाधिकार प्राप्त मंडलों में सक्रिय थीं, वहीं सावित्रीबाई एक हाशिए पर रहने वाली जाति से आईं, और उनकी कक्षाएँ उन लड़कियों से भरी थीं जिन्हें जन्म से ही बताया गया था कि ज्ञान उनके लिए

निषिद्ध है (Pal, 2024)। इस प्रकार उनका कार्य केवल भारत की बौद्धिक परंपरा का विस्तार नहीं था, बल्कि उसका क्रांतिकारी विस्तार था–शिक्षा का अधिकार उन तक पहुँचाना जिन्हें ऐतिहासिक रूप से वंचित रखा गया था।

उनकी शिक्षण प्रक्रिया इसलिए पुनर्स्थापनात्मक भी थी और क्रांतिकारी भी। कक्षा में प्रवेश कर वे केवल साक्षरता नहीं बाँट रही थीं, बल्कि जाति और पितृसत्ता की उन संरचनाओं को ध्वस्त कर रही थीं जिन्होंने स्त्रियों और उत्पीड़ित समुदायों को सीखने की गरिमा से वंचित किया था। उनका हर पाठ यह उद्घोषणा था कि विद्या सबकी है, केवल विशेषाधिकार प्राप्त लोगों की नहीं। इस प्रकार सावित्रीबाई ने शिक्षा को सामाजिक न्याय का साधन बना दिया, उस सभ्यतागत सिद्धांत को मूर्त रूप देते हुए कि ज्ञान का उद्देश्य मुक्ति है (Sarvamangala, 2022)। एक शिक्षिका के रूप में उनकी उपस्थिति ने जड़ जमाए पदानुक्रमों को चुनौती दी, यह सिद्ध करते हुए कि हाशिए पर रहने वाली पृष्ठभूमि से आई महिलाएँ भी सुधार का नेतृत्व कर सकती हैं और सामूहिक परिवर्तन को प्रेरित कर सकती हैं। इस प्रकार उनकी भूमिका केवल प्रतीकात्मक नहीं थी, बल्कि एक जीवित क्रांति थी–जो भारत की प्राचीन बौद्धिक परंपराओं को आधुनिक समानता के संघर्षों से जोड़ रही थी। सावित्रीबाई की कक्षाएँ वे स्थान बन गईं जहाँ समाज की दबाई गई आवाज़ें उठ सकें, गरिमा पुनः प्राप्त कर सकें और एक अधिक न्यायपूर्ण भविष्य के निर्माण में भाग ले सकें (Bera, 2024)।

जब सावित्रीबाई फुले ने औपचारिक शिक्षक प्रशिक्षण पूरा किया और भारत की पहली आधुनिक महिला शिक्षिका के रूप में अपनी भूमिका निभाई, तो यह केवल प्रशासनिक कार्य नहीं था, बल्कि सभ्यतागत था। उस क्षण में वे उस परंपरा को पुनः प्राप्त कर रही थीं जो भारतीया विदुषियों–गार्गी, मैत्रेयी और आत्मदेवी–तक जाती है, जिनकी बौद्धिक उपस्थिति ने कभी भारतीय चिंतन को आकार दिया था, परंतु सदियों की सामाजिक प्रतिगति ने उसे दबा दिया था (Forbes, 1996)। हालांकि, सावित्रीबाई की यात्रा प्राचीन विदुषियों से भिन्न थी। गार्गी और मैत्रेयी जहाँ वैदिक विमर्श के विशेषाधिकार प्राप्त मंडलों में सक्रिय थीं, वहीं सावित्रीबाई एक हाशिए पर रहने वाली जाति से आईं, और उनकी कक्षाएँ उन लड़कियों से भरी थीं जिन्हें जन्म से ही बताया गया था कि ज्ञान उनके लिए निषिद्ध है (Pal, 2024)। इस प्रकार उनका कार्य केवल भारत की बौद्धिक परंपरा का विस्तार नहीं था, बल्कि उसका क्रांतिकारी विस्तार था–शिक्षा का अधिकार उन तक पहुँचाना जिन्हें ऐतिहासिक रूप से वंचित रखा गया था।

उनकी शिक्षण प्रक्रिया इसलिए पुनर्स्थापनात्मक भी थी और क्रांतिकारी भी। कक्षा में प्रवेश कर वे केवल साक्षरता नहीं बाँट रही थीं, बल्कि जाति और पितृसत्ता की उन संरचनाओं को ध्वस्त कर रही थीं जिन्होंने स्त्रियों और उत्पीड़ित समुदायों को सीखने की गरिमा से वंचित किया था। उनका हर पाठ यह उद्घोषणा था कि विद्या सबकी है, केवल विशेषाधिकार प्राप्त लोगों की नहीं। इस प्रकार सावित्रीबाई ने शिक्षा को सामाजिक न्याय का साधन बना दिया, उस सभ्यतागत सिद्धांत को मूर्त रूप देते हुए कि ज्ञान का उद्देश्य मुक्ति है (Sarvamangala, 2022)। एक शिक्षिका के रूप में उनकी उपस्थिति ने जड़ जमाए पदानुक्रमों को चुनौती दी, यह सिद्ध करते हुए कि हाशिए पर रहने वाली पृष्ठभूमि से आई महिलाएँ भी सुधार का नेतृत्व कर सकती हैं और सामूहिक परिवर्तन को प्रेरित कर सकती हैं। इस प्रकार उनकी भूमिका केवल प्रतीकात्मक नहीं थी, बल्कि एक जीवित क्रांति थी–जो भारत की प्राचीन बौद्धिक परंपराओं को आधुनिक समानता के संघर्षों से जोड़ रही थी। सावित्रीबाई की कक्षाएँ वे स्थान बन गईं जहाँ समाज की दबाई गई आवाज़ें उठ सकें, गरिमा पुनः प्राप्त कर सकें और एक अधिक न्यायपूर्ण भविष्य के निर्माण में भाग ले सकें (Bera, 2024)।

जब सावित्रीबाई और ज्योतिराव फुले ने 1848 में पुणे के भिडे वाडा में पहला कन्या विद्यालय खोला, तो वे केवल एक संस्था स्थापित नहीं कर रहे थे; वे उस सभ्यतागत सिद्धांत को पुनर्जीवित कर रहे थे जो लंबे समय से दबा हुआ था–कि शिक्षा जाति और लिंग से परे सबके लिए खुली होनी चाहिए। एक साधारण ईंटों की इमारत में उन्होंने एक साथ दो गहरी जड़ें जमाए शक्तियों को चुनौती दी: ब्राह्मणवादी एकाधिकार जिसने साक्षरता को उच्च जातियों का विशेषाधिकार बना रखा था, और औपनिवेशिक व्यवस्था जिसने "उचित शिक्षा" को संकीर्ण, अभिजात्य परिभाषाओं तक सीमित कर दिया था (O'Hanlon, 1985)। उनका विद्यालय एक क्रांतिकारी पुनरुद्धार था, जिसने भारतीय विद्या को मुक्ति के रूप में पुनर्स्थापित किया और उसके दायरे को उन तक विस्तारित किया जिन्हें व्यवस्थित रूप से बाहर रखा गया था (Omvedt, 1976)।

सावित्रीबाई के लिए प्रतिदिन विद्यालय तक पैदल जाना स्वयं में एक संघर्ष था। वे अतिरिक्त साड़ी लेकर निकलती थीं क्योंकि उन पर पत्थर, कीचड़ और गोबर फेंका जाता था–उन लोगों द्वारा जो स्त्री शिक्षा को सामाजिक व्यवस्था के लिए खतरा मानते थे। यह आक्रामकता केवल व्यक्तिगत अपमान नहीं थी; यह उस समाज का हिंसक प्रतिरोध था जो उस स्त्री को अस्वीकार कर रहा था जिसने वंचितों को ज्ञान लौटाने का साहस किया। किंतु उनकी दृढ़ता ने हर अपमान को विद्रोह के प्रतीक में बदल दिया। शत्रुता के बावजूद पढ़ाना जारी रखकर उन्होंने यह सिद्ध किया कि शिक्षा कोई रियायत नहीं बल्कि अधिकार है (Bera, 2024)।

भिडे वाडा विद्यालय आशा का आश्रय बन गया, जहाँ युवा लड़कियाँ और हाशिए पर रहने वाले बच्चे शिक्षा के माध्यम से गरिमा प्राप्त कर सकते थे। यहीं सावित्रीबाई का साहस और ज्योतिराव की दृष्टि एक साथ आई, एक ऐसी साझेदारी का निर्माण करते हुए जिसने सदियों के उत्पीड़न को ध्वस्त किया। भिडे वाडा में उनका कार्य केवल शैक्षिक प्रयोग नहीं था; यह सभ्यतागत पुनरुत्थान था, यह सिद्ध करते हुए कि वास्तविक प्रगति समावेशिता में निहित है। शत्रुता के बीच उन्होंने एक ऐसी विरासत गढ़ी जो आज भी समानता और न्याय के आंदोलनों को प्रेरित करती है (Pal, 2024)।

भारतीय ज्ञान परंपरा में निहित शिक्षण पद्धति

सावित्रीबाई की शिक्षण पद्धति गहराई से भारतीय थी। उन्होंने केवल औपनिवेशिक पाठ्यक्रम की नकल नहीं की, बल्कि स्थानीय अनुभवों, दैनिक जीवन कौशल और नैतिक तर्क को शामिल किया, जो आज भारतीय ज्ञान प्रणाली (Indian Knowledge System) में संदर्भित और समुदाय-आधारित शिक्षा के रूप में जाना जाता है (Nelson, n.d.)। सावित्रीबाई और ज्योतिराव फुले द्वारा स्थापित विद्यालय औपनिवेशिक संस्थानों की प्रतिकृतियाँ नहीं थे; वे भारतीय सभ्यतागत समग्र शिक्षा के भाव को मूर्त रूप देने के लिए सचेत रूप से निर्मित किए गए थे। भिडे वाडा और बाद के विद्यालयों में सावित्रीबाई की शिक्षण पद्धति इस सिद्धांत को प्रतिबिंबित करती थी कि शिक्षा को मनुष्य को बौद्धिक, नैतिक, सामाजिक और व्यावहारिक रूप से संपूर्ण बनाना चाहिए (Pol, 2023)। उन्होंने अपने शिक्षण को रटने या परीक्षा-आधारित पाठ्यक्रम तक सीमित नहीं किया, जो औपनिवेशिक स्कूलों की पहचान बन चुका था। इसके बजाय उन्होंने स्थानीय अनुभवों, दैनिक जीवन कौशल और नैतिक तर्क को अपने पाठों में समाहित किया, जो आज भारतीय ज्ञान प्रणाली (IKS) में संदर्भित और समुदाय-आधारित शिक्षा के रूप में परिभाषित है (Roy, 2023)।

उदाहरण के लिए, साक्षरता के साथ-साथ विद्यार्थियों को स्वच्छता, व्यावसायिक कौशल और सामाजिक जागरूकता भी सिखाई जाती थी। यह क्रांतिकारी था क्योंकि इसने यह स्वीकार किया कि शिक्षा केवल औपनिवेशिक नौकरशाही

के लिए क्लर्क तैयार करने का साधन नहीं है, बल्कि समुदायों को गरिमा और आत्मनिर्भरता के साथ जीने के लिए सशक्त बनाने का माध्यम है। कई मायनों में सावित्रीबाई ने गांधी के *नई तालीम* दर्शन की पूर्वकल्पना दशकों पहले ही कर दी थी, यह बल देते हुए कि उचित शिक्षा व्यावहारिक, मूल्य-आधारित और लोगों के जीवनानुभवों में निहित होनी चाहिए (Wikipedia, 2024)।

सावित्रीबाई की कक्षाएँ मुक्ति के स्थल बन गईं, जहाँ लड़कियाँ और हाशिए पर रहने वाली जातियों के बच्चे ज्ञान को बहिष्कार नहीं बल्कि गरिमा की शक्ति के रूप में अनुभव कर सकते थे। पढ़ना-लिखना सिखाकर वे केवल साक्षरता के द्वार नहीं खोल रही थीं, बल्कि उन मानसिक अवरोधों को भी तोड़ रही थीं जिन्हें जाति और पितृसत्ता ने थोप रखा था। उनके प्रत्येक पाठ में समता (समानता) और न्याय (न्याय) का गहन दार्शनिक आधार निहित था–वे मूल्य जिन्हें ज्योतिराव ने उनमें रोपित किया था और जिन्हें वे अब अपने विद्यार्थियों तक पहुँचा रही थीं (Pal, 2024)।

यह शिक्षण पद्धति अपने स्वरूप में सभ्यतागत थी। इसने विद्या को मुक्ति के रूप में भारतीय परंपरा में पुनर्जीवित किया और उसे उन तक विस्तारित किया जिन्हें ऐतिहासिक रूप से शिक्षा से वंचित रखा गया था। ऐसा करते हुए सावित्रीबाई और ज्योतिराव ने शिक्षा को जन्म का विशेषाधिकार नहीं बल्कि सामूहिक अधिकार के रूप में पुनर्परिभाषित किया। उनके विद्यालय केवल शिक्षा संस्थान नहीं थे, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की प्रयोगशालाएँ थे, जहाँ समाज की दबाई गई आवाज़ें उठ सकें, गरिमा पुनः प्राप्त कर सकें और एक अधिक न्यायपूर्ण भविष्य के निर्माण में भाग ले सकें (Bera, 2024)।

कक्षा से परे सामाजिक सुधार

सावित्रीबाई फुले की सशक्तिकरण की दृष्टि कभी भी कक्षा की चारदीवारी तक सीमित नहीं रही। उनके लिए शिक्षा सामाजिक सुधार से अलग नहीं थी, क्योंकि गरिमा के बिना साक्षरता उत्पीड़ितों को मुक्त नहीं कर सकती थी। ज्योतिराव के साथ मिलकर उन्होंने समझा कि जाति और पितृसत्ता की संरचनात्मक अन्याय केवल विद्यालयों से नहीं मिटेंगे, बल्कि ऐसे सुरक्षित स्थानों की भी आवश्यकता है जहाँ स्त्रियाँ और हाशिए पर रहने वाले समुदाय अपनी मानवता पुनः प्राप्त कर सकें (O'Hanlon, 1985)। इसी कारण उन्होंने शिक्षण से आगे बढ़कर उन संस्थाओं का निर्माण किया जो उनके समय की सबसे गंभीर सामाजिक बुराइयों का समाधान करती थीं।

उनके सबसे साहसिक हस्तक्षेपों में से एक था बाल विवाह का विरोध और विधवा पुनर्विवाह का समर्थन। उस समाज में जहाँ विधवाओं को अलगाव और अपमान का जीवन जीने के लिए मजबूर किया जाता था, सावित्रीबाई ने ऐसे आश्रय बनाए जहाँ वे गरिमा के साथ रह सकें (Forbes, 1996)। उन्होंने उन शिशुओं के लिए भी गृह स्थापित किए जिन्हें पितृसत्तात्मक क्रूरता के कारण त्याग दिया जाता था, यह सुनिश्चित करते हुए कि वे मरने के लिए न छोड़े जाएँ बल्कि देखभाल और पोषण पाएँ (Bera, 2024)। ये पहल भारतीय ज्ञान परंपरा के *लोकविद्या* सिद्धांत को प्रतिबिंबित करती थीं–समुदाय-आधारित वह बुद्धि जहाँ ज्ञान अमूर्त नहीं होता बल्कि सामाजिक घावों को भरने के लिए लागू किया जाता है (Sarvamangala, 2022)।

सावित्रीबाई फुले के सुधार व्यावहारिक और करुणामय थे। उन्होंने ऐसे सामुदायिक स्थल बनाए जहाँ स्त्रियाँ बिना भय के सीख सकें, और जहाँ साक्षरता को व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा नैतिक शिक्षा के साथ जोड़ा गया। ये स्थल क्रांतिकारी थे क्योंकि उन्होंने साझा शिक्षा के उस सभ्यतागत आदर्श को संरक्षित किया, जिसमें ज्ञान ऊर्ध्वाधर

(hierarchical) नहीं बल्कि क्षैतिज (horizontal) रूप से प्रवाहित होता है (Pal, 2024)। ऐसा करते हुए सावित्रीबाई ने ब्राह्मणवादी रूढ़िवाद और औपनिवेशिक कठोरता दोनों को चुनौती दी, यह सिद्ध करते हुए कि शिक्षा न्याय का जीवित अनुभव होना चाहिए (Omvedt, 1976)।

उनके प्रत्येक सुधार का आधार समता (समानता) और न्याय (न्याय) जैसे गहन दार्शनिक सिद्धांतों में निहित था। विधवाओं, अनाथों और हाशिए पर रहने वाली स्त्रियों के लिए संस्थाएँ बनाकर उन्होंने यह दिखाया कि सशक्तिकरण केवल व्यक्तिगत सफलता का नाम नहीं है, बल्कि सामूहिक उत्थान का मार्ग है। कक्षा से परे उनके कार्यों ने सुनिश्चित किया कि शिक्षा सामाजिक परिवर्तन में रूपांतरित हो, जिससे वे केवल भारत की पहली महिला शिक्षिका ही नहीं बल्कि समावेशी कल्याण की प्रारंभिक वास्तुकारों में से एक बन गईं।

प्लेग के दौरान सेवा और बलिदान

सावित्रीबाई फुले के जीवन का अंतिम अध्याय वही करुणा और सेवा के मूल्यों को प्रतिबिंबित करता है, जिन्होंने उनके शिक्षण और सुधार कार्य को परिभाषित किया था। उनके लिए शिक्षा कभी भी *सेवा*–ज़रूरतमंदों की सहायता–के नैतिक कर्तव्य से अलग नहीं थी। यह सिद्धांत, जो भारतीय सभ्यतागत ethos में गहराई से निहित है, ने 1897 की विनाशकारी प्लेग महामारी के दौरान उनके कार्यों का मार्गदर्शन किया। उस समय जब भय और परित्याग ने समुदायों को जकड़ लिया था, सावित्रीबाई ने साहस और मानवता के साथ कार्य करना चुना (The Better India, 2020)।

अपने दत्तक पुत्र यशवंतराव के साथ मिलकर उन्होंने एक क्लिनिक खोला, जहाँ विशेष रूप से झुग्गियों के वे बच्चे जिनकी कोई सहायता नहीं कर रहा था, उपचार पा सके। सावित्रीबाई स्वयं बीमार बच्चों को सड़कों से उठाकर क्लिनिक तक ले जाती थीं, इस प्रकार उस शाश्वत भारतीय आदेश को मूर्त रूप देती थीं कि पीड़ितों की सेवा सर्वोच्च कर्तव्य है। इस कार्य से उन्होंने दिखाया कि सशक्तिकरण केवल ज्ञान का नाम नहीं है, बल्कि करुणा को कर्म में उतारना भी है। प्लेग के दौरान उनका कार्य उनके आजीवन मिशन का विस्तार था–उन लोगों को गरिमा लौटाना जिन्हें समाज ने उपेक्षित किया था (O'Hanlon, 1985)।

दुर्भाग्यवश, सेवा के प्रति उनकी निष्ठा ने उनका जीवन ले लिया। बीमारों की देखभाल करते हुए वे स्वयं इस रोग से संक्रमित हो गईं और 10 मार्च 1897 को पुणे में उनका निधन हो गया (Wikipedia, 2025)। किंतु मृत्यु में भी वे दृढ़ता और बलिदान का प्रतीक बनी रहीं। उनका जाना केवल भारत की पहली महिला शिक्षिका का खोना नहीं था, बल्कि उस सुधारक का शहादत था जिसने समानता, न्याय और करुणा के मूल्यों को बनाए रखने के लिए अपना जीवन अर्पित कर दिया (Omvedt, 1976)।

प्लेग के दौरान सावित्रीबाई की मृत्यु उनके दर्शन का चरमोत्कर्ष बन गई। उन्होंने oppressed समुदायों को मुक्त करने के लिए पढ़ाया, लिखा और संगठित किया, और अंततः उन्हें अपने हाथों से सेवा दी। उनके बलिदान ने उनकी विरासत को भारत की सभ्यतागत स्मृति की संरक्षिका के रूप में स्थायी बना दिया–एक ऐसी स्त्री जिसने यह सिद्ध किया कि ज्ञान और सेवा मिलकर ही सच्ची मुक्ति का निर्माण करते हैं (Forbes, 1996)।

जीवनसाथी, समाज और महिला सशक्तिकरण

सावित्रीबाई और ज्योतिराव फुले की कहानी से आज की पीढ़ी को यह सीखना चाहिए कि साझेदारी, सम्मान और साझा दृष्टि ही सशक्तिकरण की सही नींव हैं। ज्योतिराव का सावित्रीबाई के प्रति समर्थन यह दर्शाता है कि एक जीवनसाथी अपनी पत्नी को दबाने के बजाय उसे सशक्त कर सकता है, उसकी क्षमता को पोषित कर सकता है। घर पर उन्हें पढ़ाने और उपहास के बीच उनके साथ खड़े रहने का निर्णय यह दिखाता है कि प्रगति विश्वासपूर्ण संबंधों से शुरू होती है (O'Hanlon, 1985)। समाज को भी यह समझना होगा कि सशक्तिकरण सामूहिक है; जब स्त्रियाँ शिक्षित और समर्थित होती हैं, तो परिवार और समुदाय फलते-फूलते हैं। संदेश स्पष्ट है: जीवनसाथी और समाज दोनों को साझा जिम्मेदारी निभानी चाहिए, ताकि गरिमा और अवसर विशेषाधिकार नहीं बल्कि सबके अधिकार बन सकें (Chakravarti, 1998)।

महिला सशक्तिकरण केवल व्यक्तिगत संबंधों तक सीमित नहीं है। यह एक रूपांतरणकारी प्रक्रिया है जो समाज की नींव को पुनः गढ़ती है। सावित्रीबाई फुले का जीवन यह दर्शाता है कि सशक्तिकरण शिक्षा से शुरू होता है, क्योंकि साक्षरता गरिमा, आत्मनिर्भरता और सार्वजनिक जीवन में भागीदारी का द्वार है। लड़कियों और हाशिए पर रहने वाले समुदायों के लिए विद्यालय खोलकर उन्होंने सदियों के बहिष्कार को चुनौती दी और यह सिद्ध किया कि स्त्रियाँ दान की निष्क्रिय प्राप्तकर्ता नहीं बल्कि परिवर्तन की सक्रिय वाहक हैं। उनकी कक्षाएँ मुक्ति के स्थल बन गईं, जहाँ ज्ञान ने जाति और पितृसत्ता द्वारा थोपे गए मानसिक अवरोधों को तोड़ा (Deshpande, 2002)।

सशक्तिकरण के लिए सामाजिक सुधार भी आवश्यक है। सावित्रीबाई ने बाल विवाह जैसी दमनकारी प्रथाओं को अस्वीकार किया और विधवाओं के लिए आश्रय तथा परित्यक्त शिशुओं के लिए गृह बनाए। इन संस्थाओं ने स्त्रियों को केवल सुरक्षा ही नहीं दी, बल्कि अपनी मानवता पुनः प्राप्त करने का अवसर भी दिया (Gokhale, 2017)। इस प्रकार उन्होंने दिखाया कि सशक्तिकरण केवल साक्षरता तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें करुणा, न्याय और सामुदायिक सहयोग भी शामिल होना चाहिए। ज्योतिराव के साथ सत्यशोधक समाज की स्थापना में उनकी भूमिका यह और स्पष्ट करती है कि सशक्तिकरण बौद्धिक भी है और व्यावहारिक भी। इसके मुख्य उद्देश्य जातिगत भेदभाव का विरोध करना, ब्राह्मणवादी प्रभुत्व को चुनौती देना और शूद्रों, अति-शूद्रों (दलितों) तथा स्त्रियों को शिक्षा और सामाजिक सुधारों के माध्यम से ऊपर उठाना था। इस आंदोलन ने कम खर्च वाले बिना पुजारी के विवाह जैसे सामाजिक प्रयोगों को बढ़ावा दिया और किसानों के शोषण को उजागर करने के लिए अख़बार भी प्रकाशित किया।

तत्व विचार–आलोचनात्मक चिंतन की परंपरा–को पुनर्जीवित कर सावित्रीबाई ने ज्ञान को गहरे सामाजिक विकृतियों को ध्वस्त करने की दिशा में निर्देशित किया (Omvedt, 1976)। उन्होंने अपने लेखन से सामाजिक मान्यताओं को चुनौती दी, जैसा कि उनकी प्रसिद्ध कविता-संग्रह *फुले* (1854) में देखा जा सकता है। उनकी कविताओं ने इस संघर्ष को सांस्कृतिक आयाम दिया, स्त्रियों को अन्याय के विरुद्ध उठ खड़े होने और अपनी आवाज़ पुनः प्राप्त करने का आह्वान किया (Pawar & Moon, 1995)। इस प्रकार उनके शैक्षिक और सामाजिक सुधार उनके साहित्यिक सक्रियता से अविभाज्य थे, जो मिलकर एक समग्र आंदोलन बने–जिसमें शिक्षण, सामाजिक न्याय और सांस्कृतिक प्रतिरोध का संगम था।

How to cite: बग्गा, टी., & मीना, क. (2025). सभ्यतागत दृष्टि से महिला सशक्तिकरण: सावित्रीबाई फुले और शिक्षा का विमर्श. *Multidisciplinary Multilingual Research Journal, 1*(2), 22-31. https://doi.org/10.64006/mmrj/1204

आधुनिक समाज के लिए सावित्रीबाई की विरासत एक मार्गदर्शिका है: स्त्रियों को समावेशी शिक्षा के माध्यम से सशक्त करना, दमनकारी संरचनाओं को ध्वस्त करना और ऐसी संस्थाएँ बनाना जो गरिमा की रक्षा करें। सशक्तिकरण केवल व्यक्तिगत सफलता का नाम नहीं है; यह सामूहिक उत्थान का मार्ग है। जब स्त्रियाँ सशक्त होती हैं, तो परिवार समृद्ध होते हैं, समुदाय मजबूत होते हैं और राष्ट्र प्रगति करता है। सावित्रीबाई का जीवन हमें याद दिलाता है कि महिला सशक्तिकरण एक न्यायपूर्ण और करुणामय समाज की आधारशिला है, और 21वीं सदी में भी यह परिवर्तन की सबसे शक्तिशाली शक्ति बनी हुई है (Forbes, 1996)।

निष्कर्ष

सावित्रीबाई फुले का जीवन यह शाश्वत स्मरण कराता है कि महिला सशक्तिकरण एक न्यायपूर्ण और करुणामय समाज की आधारशिला है। उन्होंने दिखाया कि सशक्तिकरण शिक्षा से शुरू होता है, क्योंकि साक्षरता गरिमा, आत्मनिर्भरता और सार्वजनिक जीवन में भागीदारी का द्वार है। लड़कियों और हाशिए पर रहने वाले समुदायों के लिए विद्यालय खोलकर उन्होंने सदियों के बहिष्कार को चुनौती दी और यह सिद्ध किया कि स्त्रियाँ दान की निष्क्रिय प्राप्तकर्ता नहीं बल्कि परिवर्तन की सक्रिय वाहक हैं। उनकी कक्षाएँ मुक्ति के स्थल बन गईं, जहाँ ज्ञान ने जाति और पितृसत्ता द्वारा थोपे गए मानसिक अवरोधों को तोड़ा। शिक्षा से परे उन्होंने विधवाओं के लिए आश्रय, परित्यक्त शिशुओं के लिए गृह और ऐसे आंदोलन स्थापित किए जिन्होंने स्त्रियों को सुरक्षा, गरिमा और आवाज़ दी। ज्योतिराव के साथ साझेदारी में उन्होंने दिखाया कि सशक्तिकरण व्यक्तिगत संघर्ष नहीं बल्कि सामूहिक मिशन है, जो संबंधों में समानता से शुरू होकर पूरे समाज तक विस्तारित होता है।

सावित्रीबाई की दृष्टि केवल सामाजिक नहीं बल्कि सभ्यतागत थी। उन्होंने भारतीय ज्ञान परंपरा के उस सिद्धांत को मूर्त रूप दिया कि *विद्या* मुक्ति है, मात्र निर्देश नहीं। उनकी शिक्षण पद्धति ने स्थानीय अनुभवों, नैतिक तर्क और समुदाय-आधारित शिक्षा को समाहित किया, यह पुनर्जीवित करते हुए कि शिक्षा मनुष्य को बौद्धिक, नैतिक, सामाजिक और व्यावहारिक रूप से संपूर्ण बनाए। सत्यशोधक समाज की स्थापना में उन्होंने और ज्योतिराव ने *तत्व विचार*–आलोचनात्मक चिंतन–को पुनर्जीवित किया, ताकि जाति और लिंग की विकृतियों को ध्वस्त किया जा सके। साथ ही, उनकी कविताओं ने *साहित्य* को नैतिक शिक्षा के साधन के रूप में आगे बढ़ाया, भक्ति की समानतावादी आवाज़ को आधुनिक नारीवादी चिंतन से जोड़ते हुए। आज जब भारतीय ज्ञान प्रणाली (IKS) को विश्वविद्यालयों और नीतिगत ढाँचों में पुनर्जीवित किया जा रहा है, सावित्रीबाई उसके सबसे शक्तिशाली आधुनिक मूर्त रूपों में से एक के रूप में खड़ी हैं। उन्होंने केवल पढ़ाया नहीं, बल्कि *विद्या* को उसके नैतिक स्थान पर पुनर्स्थापित किया। उन्होंने केवल अन्याय से संघर्ष नहीं किया, बल्कि भारत के स्वदेशी समानता के सिद्धांतों को पुनर्जीवित किया। उन्होंने केवल विद्यालय नहीं बनाए, बल्कि शिक्षा के साथ भारत के नैतिक संबंध को पुनर्निर्मित किया।

इस प्रकार सावित्रीबाई फुले केवल महिला सशक्तिकरण की अग्रदूत ही नहीं, बल्कि भारत की सभ्यतागत स्मृति की संरक्षिका भी हैं। इस स्त्री ने उस समय भारतीय ज्ञान को मुक्ति के रूप में पुनः प्रज्वलित किया जब इसकी सबसे अधिक आवश्यकता थी।

How to cite: बग्गा, टी., & मीना, क. (2025). सभ्यतागत दृष्टि से महिला सशक्तिकरण: सावित्रीबाई फुले और शिक्षा का विमर्श. *Multidisciplinary Multilingual Research Journal, 1*(2), 22-31. https://doi.org/10.64006/mmrj/1204

संदर्भ सूची

Bera, M. (2024). Savitribai Phuli: An Indian pioneer in women's education. *International Journal of Novel Research and Development, 9*(2), 311–316. https://www.ijnrd.org/papers/IJNRD2402311.pdf

Bhagat, R., & Shinde, S. (2014). *Savitribai Phule: First Indian woman teacher*. Pune University Press.

Chakravarti, U. (1998). *Rewriting history: The life and times of Pandita Ramabai*. Kali for Women.

Deshpande, S. (2002). Caste and caste politics in Maharashtra. *Economic and Political Weekly, 37*(2), 120–124.

Forbes, G. (1996). *Women in modern India*. Cambridge University Press.

Gokhale, S. (2017). Savitribai Phule and the struggle for women's rights. *Indian Journal of Gender Studies, 24*(3), 345–360. https://doi.org/10.1177/0971521517712010

Phule, S. (1854). *Kavya Phule*. Pune, India.

Maneesha, & Biswas, S. (2024). The role of Savitribai Phule in modern Indian education. *International Journal of Research Publication and Reviews, 5*(6), 1982–1988. https://doi.org/10.55248/gengpi.5.0624.1461

Nelson, N. J. (n.d.). *Jyotiba Phule and Savitribai Phule – Education and society*. INFLIBNET. https://ebooks.inflibnet.ac.in/socp13/chapter/193/

O'Hanlon, R. (1985). *Caste, conflict and ideology: Mahatma Jotirao Phule and low caste protest in nineteenth-century Western India*. Cambridge University Press.

Omvedt, G. (1976). *Cultural revolt in a colonial society: The non-Brahman movement in western India, 1873–1930*. Scientific Socialist Education Trust.

Pal, A. (2024). Savitribai Phule: Pioneer of women education and social reform. *EPRA International Journal*. https://eprajournals.com/pdf/fm/jpanel/upload/2024/September/202409-01-018391

Pawar, U., & Moon, V. (1995). *We also made history: Women in the Dalit movement*. Zubaan.

Pol, P. (2023, December 21). The long-lasting legacy of Bhide Wada, where the Phules set up their first school. *The Wire*. https://m.thewire.in/article/rights/bhide-wada-long-lasting-legacy-phules-school

Roy, S. (2023). Savitribai Phule's contribution towards education and Indian society. *International Journal of Creative Research Thoughts, 11*(12), 212–220. https://ijcrt.org/papers/IJCRT2312212.pdf

Sarvamangala, D. (2022). The role of Savitribai Phule in women education & empowerment: A sociological study. *International Journal of Research and Analytical Reviews, 9*(4), 2886–2892. https://ijrar.org/papers/IJRAR22D2886.pdf

Studocu. (n.d.). *Indian Knowledge System notes*. Savitribai Phule Pune University. https://www.studocu.com/in/document/savitribai-phule-pune-university/bsccs/iks-notes/146571328

The Better India. (2020, March 31). How Savitribai Phule & son saved victims of bubonic plague. https://thebetterindia.com/222374/coronavirus-pandemic-maharashtra-savitribai-phule-yashvantrao-epidemic-bubonic-plague-bombay-pune-ang136/

The Prayas India. (2025, October 31). Savitribai Phule: Pioneer of women's education and social reform in India. https://theprayasindia.com/savitribai-phule/

Wikipedia. (2024). *Nai Talim*. In *Wikipedia*. https://en.wikipedia.org/wiki/Nai_Talim

Wikipedia. (2025). *Savitribai Phule*. In *Wikipedia*. https://en.wikipedia.org/wiki/Savitribai_Phule